द्वारा

डॉ आशीष सिसोदिया

व्यंजनों का वर्गीकरण -

व्यंजन - व्यंजन उन ध्वनियों को कहते हैं जिनके उच्चारण में (मुख विवर में ) वायु मार्ग में पूर्ण या अपूर्ण व्यवधान उपस्थित होता है। हिन्दी के परम्परागत ग्रन्थों में निम्नांकित व्यंजन मिलते हैं।

 क्, ख्, ग्, घ्, ङ्

 च्, छ्, ज्, झ्, ञ्

 ट्, ठ्, ड्, ढ्, ण्

 त्, थ्, द्, ध्, न्

 प्, फ्, ब्, भ्, म्

 य, र, ल, व, श, ष, स, ह

 संयुक्त स्वर - क्ष, त्र, ज्ञ

 किन्तु उपर्युक्त व्यंजनों के अतिरिक्त ड़, ढ़ का भी प्रयोग होता है। क़, ख़, ग़, ज़, फ़ आदि का प्रयोग हिन्दी में अब प्रायः बन्द हो चुका है।

व्यंजनों का वर्गीकरण -

 प्रयत्न और स्थान न केवल स्वरों के तात्विक आधार हैं, अपितु व्यंजनों के भी आधार हैं। स्पष्टता एवं सुविधा की दृष्टि से हम यहाँ पर कुछ विशेष खण्ड बनाकर घोषत्व, प्राणत्व आदि व्यंजनों का वर्गीकरण करने का प्रयास करेंगे, यद्यपि ये आते प्रयत्न के अन्तर्गत हैं। यों तो प्रयत्न और स्थान के भी अनेक भेद हो सकते हैं, किन्तु यहाँ केवल मुख्य एवं आवश्यक पर ही विचार किया गया है।

 (1) प्रयत्न के आधार पर - जब हम ध्वनियों का उच्चारण करना चाहते हैं तो हमें वायु को रोकना अथवा कई प्रकार से विकृत करना पड़ता है और यह करने के लिए हमें कई चेष्टाएँ करनी पड़ती हैं। यही चेष्टाएँ अथवा क्रिया प्रयत्न कहलाती हैं। इस आधार पर हिंदी-व्यंजनों के निम्नांकित प्रमुख भेद हो सकते हैं -

 (क) स्पर्श - स्पर्श उन ध्वनियों को कहते हैं जिनमें जिह्वा का मुख विवर के ऊपरी भाग से कहीं-न-कहीं स्पर्श अवश्य होता है। इसको ’स्फोट‘ या ’स्फोटक‘ भी कहते हैं। अंग्रेजी में इसको ैजवचए डनजमए व्बबसनेपअम आदि भी कहते हैं। जिह्वा तालु का स्पर्श करती है, इसके अतिरिक्त ओष्ठ दाँतों का, ओष्ठ ओष्ठ का स्पर्श भी करते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि स्पर्श व्यंजन वे होते हैं, जिनके उच्चारण में वायु का मार्ग अवरुद्ध करने के लिए कोई भी दो अंग (उच्चारण अवयव) स्पर्श करें। इस प्रकार के व्यंजन-क वर्ग, च वर्ग, ट वर्ग, त वर्ग तथा प वर्ग आदि हैं। किंतु अब च वर्ग एवं शेष वर्गों के अन्त्य व्यंजनों को स्पर्शी मानने में विद्वानों में मतभेद हैं।

 (ख) संघर्षी - इस प्रकार की ध्वनियों के उच्चारण में वायु का निर्गमन मार्ग अत्यंत संकीर्ण बना दिया जाता है और वायु रगड़ खाकर बाहर निकलती है। कहने का तात्पर्य है कि इस प्रकार की ध्वनियों के उच्चारण में न तो स्पर्शी की भाँति वायु अवरुद्ध होती है और न ही स्वरों की भाँति अबाध गति से निकल जाती है। सीधे शब्दों में, इनकी स्थिति स्पर्शी और स्वरों के मध्य की होती है। स्, श्, ष्, ख्, व्, ग्, ह् आदि ऐसी ही ध्वनियाँ हैं। इसे घर्ष या ऊष्म भी कहते हैं।

 (ग) स्पर्श संघर्षी (।िितपबंजम) - जिन ध्वनियों का उच्चारण स्पर्श से आरंभ होता है, किंतु अन्त स्फोट के साथ न होकर धीरे-धीरे होता है, जिससे वायु के निकलने में घर्षण जैसा होता है। हिंदी में इस प्रकार की ध्वनियाँ च्, छ्, ज्, झ् मानी जाती हैं। किंतु इनके स्पर्श संघर्षी होने में कुछ विद्वानों को आपत्ति भी है। वास्तव में प्रयोग के आधार पर ये संघर्षी और स्पर्श-संषर्घी दोनों ही हो सकती हैं।

 (घ) नासिक्य या अनुनासिक (छंेंस) - ये वे ध्वनियाँ हैं जिनके उच्चारण में वायु मार्ग किसी एक स्थान पर अवरुद्ध हो जाता है और कोमल तालु इतना झुक जाता है कि वायु नासिका द्वार से होकर निकलती है। हिंदी वर्णमाला के पंचम वर्ण इसके अन्तर्गत आते हैं। कुछ विद्वान ही नहीं, अधिकांश इनको स्पर्शी कहने के पक्ष में नहीं हैं। प्रयोग के आधार पर इनमें भी दो भेद-पूर्ण अनुनासिक और अर्द्ध अनुनासिक किए जाते हैं। अनुनासिक्य हैं - ङ्, ´्, ण्, न्, म्।

 (ङ) पाश्र्विक (स्ंजमतंस) - जिन ध्वनियों के उच्चारण मंे वायु मुखविवर में एक स्थान पर अवरुद्ध हो जाती है और वायु जिह्वा के एक या दोनों पाश्वों (अगल-बगल) से निर्गमन करने के आधार पर ध्वनियों को एक ’पाश्र्विक‘ या ’द्विपाश्र्विक‘ कहा जाता है। हिंदी की ’ल्‘ ध्वनि पाश्र्विक ध्वनि है।

 (च) लुण्ठित (त्वससमक) - जिस ध्वनि के उच्चारण में जिह्वा एक या अनेक बार वत्र्स से टकराती है या बेलन की तरह लिपट कर क्रिया करती है, वह ध्वनि लुण्ठित या लोड़ित कहलाती है। ’र‘ ध्वनि को लुण्ठित मानते हैं। डाॅ. भोलानाथ ने इसे ’प्रकम्पित‘ कहा है।

 (छ) उत्क्षिप्त (थ्संचचमक) - वे ध्वनियाँ उत्क्षिप्त कहलाती हैं जिनके उच्चारण में जिह्वा झटके के साथ उच्चारण स्थान का स्पर्श कर अपनी स्वाभाविक स्थिति में आ जाती है। इस प्रकार की ध्वनियाँ ’ड़‘, ’ढ़‘ हैं।